

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 10 अध्याय 67 — बलराम द्वारा द्विविद-वध

5 October 2026



रैवतक पर्वत की ढलानों पर दस हजार हाथियों के बल से फूला एक वानर यदुपति का उपहास करने का दुस्साहस करता है — और जान लेता है कि बलराम का मूसल और हल पृथ्वी के हर अभिमानी विध्वंसक को धूल में मिला देता है।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में पुनः स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पवित्र कथाओं और शिक्षाओं की हमारी भक्तिमयी यात्रा। दशम स्कन्ध के इस सड़सठवें अध्याय में राजा परीक्षित बलराम के अद्भुत कर्मों के विषय में और सुनने की इच्छा प्रकट करते हैं, और शुकदेवजी द्विविद की कथा सुनाते हैं — एक महाबली वानर, जिसने अपने मारे गए मित्र नरक का बदला लेने के लिए देश को उजाड़ा, ऋषियों और स्त्रियों का अपमान किया, और अन्त में स्वयं बलराम का उपहास करने रैवतक पर्वत पर जा पहुँचा। वहीं, निर्भय हँसती युवतियों के बीच, कृष्ण के बड़े भाई ने उसका अन्त कर दिया।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण

- स्कन्ध: 10 (दशम स्कन्ध, उत्तरार्ध)
- अध्याय: 67 (सप्तषष्ठितम अध्याय)
- अध्याय शीर्षक: भगवान् बलराम द्वारा द्विविद वानर का वध
- मुख्य वक्ता: श्री शुकदेव गोस्वामी (राजा परीक्षित को सुनाते हुए)
- मुख्य श्रोता: राजा परीक्षित
- मुख्य स्थल: उजाड़ा गया आनर्त देश और द्वारका के समीप रैवतक पर्वत
- केंद्रीय विषय: द्विविद वानर का उत्पात; रैवतक पर बलराम और युवतियों के सम्मुख उसकी धृष्टता; वृक्षों, शिलाओं और मुष्टियों का युद्ध; द्विविद का पतन; और बलराम का विजयी द्वारका-प्रवेश
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 10, अध्याय 67, श्लोक 1–28
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, दशम स्कन्ध, सप्तषष्ठितम अध्याय)

पूर्व अध्याय का संदर्भ

छियासठवें अध्याय में स्वयं को वासुदेव कहने वाला ढोंगी पौण्ड्रक और उसका सहयोगी काशिराज कृष्ण के हाथों मारे गए। जब काशिराज के पुत्र ने द्वारका पर एक भयंकर अभिचार-अग्नि छोड़ी, तब भगवान् के सुदर्शन चक्र ने उसे उसके रचयिताओं पर ही लौटा दिया और काशी को भस्म कर दिया। कृष्ण के ये कर्म सुनकर अब परीक्षित का हृदय कृष्ण के बड़े भाई की ओर मुड़ता है।

परीक्षित की बलराम-कथा सुनने की लालसा

गंगा-तट पर अनशन किए बैठे राजा का मन बलराम से तृप्त ही नहीं होता था। वे सुन चुके थे कि हलधर ने यमुना को कैसे खींचा और वृन्दावन में कैसे विहार किया; अब उन्होंने शुकदेवजी से प्रार्थना की कि वे बताएँ कि उन अनन्त और अप्रमेय प्रभु ने और कौन-कौन से पराक्रम किए।

भूयोऽहं श्रोतुमिच्छामि रामस्याद्भुतकर्मणः ।

अनन्तस्याप्रमेयस्य यदन्यत् कृतवान् प्रभुः ॥ १ ॥

bhūyo 'ham śrotum icchāmi rāmasyādbhuta-karmaṇaḥ anantasyāprameyasya yad anyat kṛtavān prabhuḥ

अर्थ: राजा परीक्षित ने कहा: अद्भुत कर्म करने वाले, अनन्त और अप्रमेय बलराम के विषय में मैं और भी सुनना चाहता हूँ — उन समर्थ प्रभु ने और क्या-क्या किया? (स्कन्ध 10, अध्याय 67, श्लोक 1)

द्विवेद वानर और उसका उत्पात

शुकदेवजी बोले। द्विवेद नाम का एक वानर था — असुर नरक का मित्र, वानरराज सुग्रीव का मन्त्री और मैन्द का पराक्रमी भाई। जब कृष्ण ने नरक को मारा, तब द्विवेद ने मित्र-हन्ता से प्रतिशोध लेकर अपने मित्र का ऋण चुकाने का निश्चय किया। उसने देश में आग लगा दी — वह जहाँ से गुज्रता, नगर, गाँव, खानें और गोपों की बस्तियाँ धधक उठतीं।

सख्युः सोऽपचितिं कुर्वन् वानरो राष्ट्रविप्लवम् ।
पुरग्रामाकरान् घोषानदहद् वह्निमुत्सृजन् ॥ ३ ॥

sakhyuḥ so 'pacitiṁ kurvan vānaro rāṣṭra-viplavam pura-grāmākarān ghoṣān adahad vahnim utsrjan

अर्थ: अपने मित्र का बदला चुकाते हुए उस वानर ने राज्य में विप्लव मचा दिया; अग्नि छोड़कर उसने नगरों, ग्रामों, खानों और गोपों के घोषों को जला डाला। (स्कन्ध 10, अध्याय 67, श्लोक 3)



अपने मित्र नरक का बदला लेते हुए वानर द्विवेद नगरों और गोपों की बस्तियों में आग लगाता, पहाड़ उखाड़ता, तट डुबाता और आनर्त के ऋषियों को सताता है।

उसका द्वेष आग तक सीमित न रहा। कभी वह पूरे-पूरे पहाड़ उखाड़कर उनसे समूचे प्रदेशों को चूर-चूर कर देता, विशेषकर आनर्त देश को, जहाँ उसके मित्र के हन्ता कृष्ण रहते थे। दस हज़ार हाथियों का बल रखने वाला वह वानर कभी समुद्र के बीच खड़ा होकर अपनी भुजाओं से इतना जल उछालता कि तटवर्ती प्रदेश डूब जाते। महर्षियों के आश्रमों में वह वृक्ष तोड़ डालता और यज्ञ की पवित्र अग्नियों को अपने मल-मूत्र से दूषित कर देता। बल के मद में चूर वह पुरुषों और स्त्रियों को पकड़कर पर्वतों की घाटियों और गुफाओं में फेंक देता और उनके मुख बड़ी-बड़ी चट्टानों से बन्द कर देता, जैसे ततैया कीड़े को अपने घर में बन्द कर देती है। इस प्रकार उसने सारे देश को पीड़ित किया और कुलीन स्त्रियों को भी कलंकित किया।

फिर एक दिन अत्यन्त मधुर गीत की ध्वनि सुनकर वह वानर रैवतक पर्वत की ओर चल पड़ा।

रैवतक पर युवतियों के बीच बलराम

उस पर्वत पर द्विविद ने यदुपति को विश्राम की मुद्रा में पाया। बलराम युवतियों के समूह के बीच खड़े थे, वक्ष पर कमलों की माला, और उनका अंग-अंग देखने में मनोहर था।

तत्रापश्यद् यदुपतिं रामं पुष्करमालिनम् ।

सुदर्शनीयसर्वाङ्गं ललनायूथमध्यगम् ॥ ९ ॥

tatrāpaśyad yadu-patiṁ rāmaṁ puṣkara-mālinam sudarśanīya-sarvāṅgaṁ lalanā-yūtha-madhy-gam

अर्थ: वहाँ उसने यदुओं के स्वामी बलराम को देखा — कमल-माला धारण किए, सर्वांग सुन्दर, युवतियों की मण्डली के मध्य खड़े हुए। (स्कन्ध 10, अध्याय 67, श्लोक 9)

वारुणी पीकर बलराम गा रहे थे, उनके नेत्र मधुर मद से घूम रहे थे, और उनका तेजस्वी शरीर मदमत्त गजराज-सा दमक रहा था। दुष्ट वानर, अपने शाखामृग-स्वभाव के अनुसार, डालियों पर चढ़ गया, वृक्षों को हिलाने लगा और अपनी ओर ध्यान खींचने के लिए किलकिला शब्द करने लगा। स्वभाव से चंचल और हास्यप्रिय युवतियों ने उसकी धृष्टता देखकर ठहाका लगाया; बलराम के संरक्षण में होने से उन्हें तनिक भी भय न था। इससे और ढीठ होकर वानर उनका उपहास करने लगा — भौंहे मटकाता, उनके सामने मुँह बनाता और अपने शरीर से अश्लील चेष्टाएँ करता — और यह सब वह बलराम की आँखों के ठीक सामने करता रहा।



मधुर गीत से खिंचा द्विविद रैवतक की युवतियों के बीच विश्राम करते बलराम को पाता है और उनका उपहास करने डालियाँ हिलाता है; प्रभु की शरण में युवतियाँ केवल हँसती हैं।

प्रभु के धैर्य का अन्त

क्रुद्ध होकर प्रहार करने वालों में श्रेष्ठ बलराम ने उस पर एक पत्थर फेंका। धूर्त वानर उसे बचा गया, नीचे उतरा और वारुणी का कलश उठा लिया। वह प्रभु की ओर दौत निकालकर हँसता, उन्हें चिढ़ाता और उकसाता रहा; फिर उस दुष्ट ने कलश फोड़ दिया, स्त्रियों के वस्त्र फाड़े, और अपने बल के मद में स्वयं बलराम का खुला तिरस्कार किया।

अब बलराम ने दो बातें एक साथ देखीं: अपने सामने वानर की धृष्टता, और वे देश जिन्हें इसी प्राणी ने उजाड़ा था। इन दोनों कारणों से एक साथ उन्होंने अपने शस्त्र उठा लिए।

तं तस्याविनयं दृष्ट्वा देशांश्च तदुपद्रुतान् ।

क्रुद्धो मुषलमादत्त हलं चारिजिघांसया ॥ १६ ॥

taṁ tasyāvinayaṁ dṛṣṭvā deśāṁś ca tad-upadrutān kruddho muṣalam ādatta halam cāri-jighāṁsayā

अर्थ: उस वानर की अविनय और उसके द्वारा पीड़ित देशों को देखकर प्रभु क्रोधित हुए और शत्रु का वध करने की इच्छा से उन्होंने मूसल और हल ग्रहण किया। (स्कन्ध 10, अध्याय 67, श्लोक 16)

पर्वत पर युद्ध

द्विविद भी अपार बलशाली था। उसने एक हाथ से शाल का वृक्ष उखाड़ा, बड़े वेग से झापटा और उसे बलराम के सिर पर दे मारा। किन्तु प्रभु तनिक भी नहीं डिगे।

तं तु सङ्कर्षणो मूर्ध्नि पतन्तमचलो यथा ।

प्रतिजग्राह बलवान् सुनन्देनाहनच्च तम् ॥ १८ ॥

taṁ tu saṅkarṣaṇo mūrdhni patantam acalo yathā pratijagrāha balavān sunandenāhanac ca tam

अर्थ: परन्तु बलवान् सङ्कर्षण ने पर्वत के समान अचल रहकर सिर पर गिरते उस वृक्ष को पकड़ लिया और अपने सुनन्द नामक मूसल से वानर पर प्रहार किया। (स्कन्ध 10, अध्याय 67, श्लोक 18)

मूसल से मस्तक पर आघात पाकर द्विविद लाल धारा बहाता खड़ा रहा, मानो गेरू से रँगा कोई पर्वत हो। फिर भी उसने उस चोट की परवाह न की। बढ़ते क्रोध में उसने एक और वृक्ष उखाड़ा, उसके पत्ते झाड़ डाले और पूरी शक्ति से घुमाकर मारा; बलराम ने उसके सौ टुकड़े कर दिए। उसने फिर एक और वृक्ष उठाकर क्रोध से प्रहार किया; प्रभु ने उसे भी सौ खण्डों में तोड़ डाला। इस तरह युद्ध चलता रहा। जब-जब उसका शस्त्र टूटता, वानर एक नया वृक्ष खींच लाता, यहाँ तक कि उसने आसपास का हर वृक्ष उखाड़ दिया और वन को चारों ओर से वृक्षहीन कर दिया।



पर्वत-से अचल बलराम द्विविद द्वारा सिर पर गिराए शाल वृक्ष को पकड़ लेते हैं और सुनन्द मूसल से उत्तर देते हैं, वानर के फेंके हर वृक्ष को चूर करते हुए।

फिर क्रुद्ध द्विविद ने बलराम पर शिलाओं की वर्षा कर दी; और उन सबको मूसलधारी ने खेल-खेल में चूर्ण कर डाला। अन्त में वानरों के उस स्वामी ने ताड़ के तनों जैसी अपनी दोनों भुजाओं की मुठियाँ बाँधीं, रोहिणीनन्दन के निकट पहुँचा और दोनों से उनकी छाती पर प्रहार किया। तब यादवेन्द्र ने मूसल और हल एक ओर रख दिए और क्रोध में अपने खाली हाथों से उसकी हँसली पर आघात किया। द्विविद रक्त वमन करता हुआ गिर पड़ा और फिर न उठा।

पर्वत काँपा और स्वर्ग हर्षित हुआ

इतना विशाल शरीर गिरा कि समूचा रैवतक उसके साथ हिल उठा।

चकम्पे तेन पतता सटङ्कः सवनस्पतिः ।

पर्वतः कुरुशार्दूल वायुना नौरिवाम्भसि ॥ २६ ॥

cakampe tena patatā sa-ṭaṅkaḥ sa-vanaspatiḥ parvataḥ kuru-śārdūla vāyunā naur ivāmbhasi

अर्थ: हे कुरुश्रेष्ठ, उसके धड़ाम से गिरने पर अपने शिखरों और वृक्षों सहित वह पर्वत ऐसे काँप उठा जैसे जल में वायु से नाव डोलती है। (स्कन्ध 10, अध्याय 67, श्लोक 26)

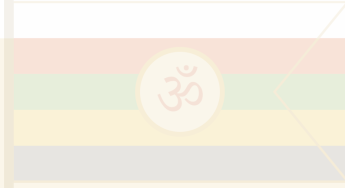


प्रभु के खाली हाथों से हँसली पर आघात पाकर द्विविद धड़ाम से गिरता है और समूचा रैवतक वायु में डोलती नाव-सा काँप उठता है।

आकाश से एक और ध्वनि आई — टूटने की नहीं, उत्सव की। देवताओं ने जय-जयकार किया, सिद्धों ने नमस्कार अर्पित किए, और श्रेष्ठ मुनि अपनी प्रशंसा पुकार उठे, और वे सब मिलकर बलराम पर पुष्पों की वर्षा करने लगे।

जयशब्दो नमःशब्दः साधु साध्विति चाम्बरे ।

सुरसिद्धमुनीन्द्राणामासीत् कुसुमवर्षिणाम् ॥ २७ ॥



jaya-śabdo namaḥ-śabdaḥ sādhu sādhv iti cāmbare sura-siddha-munīndrāṇām āsit kusuma-varṣiṇām

अर्थ: आकाश में फूल बरसाते देवताओं, सिद्धों और मुनीन्द्रों के “जय!”, “नमः!” और “साधु, साधु!” के शब्द गूँज उठे। (स्कन्ध 10, अध्याय 67, श्लोक 27)

द्वारका को वापसी

जिसने सारे जगत् को उथल-पुथल कर रखा था, वह अब न रहा। शुकदेवजी अध्याय का समापन घर लौटते प्रभु के साथ करते हैं।

एवं निहत्य द्विविदं जगद्व्यतिकरावहम् ।

संस्तूयमानो भगवान् जनैः स्वपुरमाविशत् ॥ २८ ॥

evam nihatya dvividam jagad-vyatikarāvaham samstūyamāno bhagavān janaiḥ sva-puram āviśat

अर्थ: इस प्रकार जगत् में उपद्रव लाने वाले द्विविद का वध करके भगवान् लोगों द्वारा स्तुति किए जाते हुए अपने नगर में प्रविष्ट हुए। (स्कन्ध 10, अध्याय 67, श्लोक 28)



जगत् के पीड़क का अन्त कर बलराम लोगों की स्तुतियों के बीच अपनी नगरी द्वारका लौटते हैं।

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. भक्त की श्रवण-पिपासा कभी नहीं बुझती। परीक्षित अनेक लीलाएँ सुन चुके हैं, फिर भी बलराम के विषय में “और भी” सुनना चाहते हैं (श्लोक 1)। प्रभु की कथा सुनने से तृप्ति नहीं होती, लालसा और गहरी होती है। यही सच्ची भक्ति की पहचान है — जितना सुनें, उतना ही और सुनने की इच्छा जगे।
2. धर्महीन बल संसार के विरुद्ध हो जाता है। द्विविद सुग्रीव का मन्त्री और वीर मैन्द का भाई था, फिर भी एक दुष्ट मित्र के प्रति निष्ठा ने उसके विराट बल को संसार का अभिशाप बना दिया (श्लोक 3)। धर्म में न टिका हुआ बल तटस्थ नहीं रहता; वह गाँव जलाता है, वेदियाँ दूषित करता है और निर्बलों को सताता है।
3. प्रभु का क्रोध पृथ्वी के प्रति करुणा है। यही इस अध्याय का हृदय है। बलराम ने वृक्षों का हिलाया जाना, किलकिला शब्द, अपनी सखियों का उपहास, यहाँ तक कि अपने कलश का टूटना — यह सब, जो उनके अपने विरुद्ध था, सहन किया। जो श्लोक अन्ततः उनके हाथों में शस्त्र देता है, वह दो कारण एक साथ गिनाता है: वानर की अविनय और उसके द्वारा उजाड़े गए देश (श्लोक 16)। प्रभु केवल अपमान के कारण नहीं मारते; वे इसलिए मारते हैं कि उनके सामने खड़ा यही प्राणी स्त्री-पुरुषों को गुफाओं में ज़िन्दा दफ़नाने और ऋषियों की अग्नियाँ दूषित करने वाला है। उनका क्रोध पृथ्वी की दीर्घ पुकार का अन्ततः दिया गया उत्तर है, और देवताओं की पुष्पवर्षा पुष्टि करती है कि जो क्रोध दिखा, वह वास्तव में रक्षा थी।
4. प्रभु की शरण में भय नहीं। युवतियाँ वानर की हरकतों पर इसलिए हँसीं क्योंकि बलराम के संरक्षण में उन्हें डरने की कोई बात न थी। शरणागति आत्मा को वहाँ रख देती है जहाँ भय पहुँच ही नहीं सकता।

5. अधर्म के पतन पर स्वर्ग आनन्दित होता है। देवता, सिद्ध और मुनि सबने “साधु, साधु!” कहकर पुष्प बरसाए (श्लोक 27)। अत्याचारी का अन्त कोई कठोर विवशता नहीं, अपितु दिव्य उत्सव का कारण है, क्योंकि उससे वह व्यवस्था लौटती है जिसे स्वयं प्रभु धारण करते हैं।

एक भक्तिमय चिन्तन

इस अध्याय को केवल बल की कथा समझना सरल है — वृक्ष चूर, शिलाएँ चूर्ण, एक दैत्याकार प्राणी खाली हाथों से धराशायी। किन्तु भक्त की दृष्टि कुछ और शान्त बात पकड़ती है। बलराम प्रतीक्षा करते हैं। अपनी संगिनियों के सामने उनका उपहास होता है, उनका पेय छीनकर फोड़ा जाता है, उनके पास की स्त्रियाँ लज्जित की जाती हैं, और फिर भी वे केवल एक पत्थर फेंकते हैं। जो उन्हें अन्ततः हिलाता है, वह उनकी अपनी गरिमा को लगी चोट नहीं, बल्कि जलते गाँवों और बन्द गुफाओं की स्मृति है। अपने प्रति अपराधों के लिए प्रभु की सहनशीलता विशाल है; अपने प्राणियों के प्रति क्रूरता के लिए उनकी सहनशीलता की एक सीमा है।

यहाँ हमारे अपने क्रोध के विषय में एक सीख है। हम अपने अपमान पर भड़क उठते हैं और दूसरों पर हुए अन्याय के आगे चुप रहते हैं। बलराम इस क्रम को उलट देते हैं। और जब वे कर्म करते हैं, तब स्वर्ग स्वयं तालियाँ बजाता है — इसलिए नहीं कि हिंसा सुन्दर है, बल्कि इसलिए कि एक पीड़क से मुक्त संसार फिर साँस ले पाता है। प्रभु से प्रेम करना उनकी प्राथमिकताएँ सीखना है: अपने घावों पर धैर्य, असहायों की रक्षा में दृढ़ता, और पृथ्वी का भार उतरने पर कृतज्ञता।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज जब कोई बात आपके अभिमान को चोट पहुँचाए, तब प्रतिक्रिया से पहले रुकें और रैवतक पर अडिग खड़े बलराम को स्मरण करें जब वानर उनका उपहास कर रहा था। फिर स्वयं से पूछें कि क्या पास में कोई निर्बल है — कोई व्यक्ति, कोई प्राणी, कोई पवित्र वस्तु — जिसे वास्तव में आपकी रक्षा की उससे अधिक आवश्यकता है जितनी आपके अभिमान को बचाव की। रक्षा का वह कर्म, चाहे कितना छोटा हो, हलधर प्रभु की सेवा के रूप में अर्पित करें। आरम्भ में धीरे-धीरे जपें: ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

उपसंहार

दशम स्कन्ध का यह सड़सठवाँ अध्याय हमें बलराम को पृथ्वी के रक्षक के रूप में दिखाता है। असुर नरक का बदला लेने निकला द्विविद नाम का वानर नगरों को जलाता, तटों को डुबाता, ऋषियों के आश्रम दूषित करता और निर्दोषों को पर्वत-गुफाओं में बन्द करता रहा; फिर वह स्वयं प्रभु को चिढ़ाने रैवतक पर आ पहुँचा। बलराम ने उपहास देर तक सहा, किन्तु जब उन्हें उजड़े देशों की याद आई, तब उन्होंने मूसल और हल उठाए, वानर द्वारा फेंके हर वृक्ष और शिला को तोड़ा, और अन्त में अपने दो हाथों से उसे गिरा दिया, जिससे पर्वत काँप उठा और देवताओं ने पुष्प बरसाए। हम भी, यह स्मरण करते हुए कि प्रभु का धैर्य केवल पीड़ित संसार के लिए ही समाप्त हुआ, उनकी करुणा और उनके साहस को एक साथ धारण करना सीखें।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जगाए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

संदर्भ एवं आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी), दशम स्कन्ध (उत्तरार्ध), सप्तषष्ठितम अध्याय, पृष्ठ 402–404।
- श्रृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज्ञम • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी एवं लिप्यन्तरण सहित दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश रूप में प्रस्तुत हैं। यह किसी एक प्रकाशक के सतत अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी प्रकाशक के संबंध या समर्थन का दावा नहीं किया गया है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-10-chapter-67-balarama-slays-dvividahi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

